Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 1 | Issue 2 | (Apr – Jun 2024)

भक्ति कालीन काव्य में सामाजिक समरसता की अवधारणा

प्रिया वर्मा

शोध छात्र (पीएच.डी.), हिन्दी विभाग, महाराजा अग्रसेन कॉलेज

सारांश

भक्ति कालीन काव्य भारतीय समाज में व्याप्त विषमता, जातिवाद, धार्मिक रूढ़ियों और सामाजिक भेदभाव के विरुद्ध एक सशक्त आवाज़ के रूप में उभरा। इस युग के कवियों ने भक्ति को व्यक्तिगत अनुभव के साथ-साथ सामाजिक जागरूकता का माध्यम बनाया। कबीर, रविदास, मीराबाई, तुलसीदास और अन्य संत कवियों ने अपने काव्य के माध्यम से सामाजिक समरसता, मानवतावाद और समता के संदेश को जन-जन तक पहुँचाया। इन्होंने न केवल धार्मिक कट्टरता का विरोध किया, बल्कि एक ऐसे समाज की कल्पना की जहाँ सभी मानव बराबर हों। यह समीक्षा-पत्र भक्ति कालीन काव्य में निहित सामाजिक समरसता की अवधारणा का विश्लेषण करता है और यह दर्शाता है कि किस प्रकार भक्ति आंदोलन ने भारतीय समाज में समन्वय और एकता की भावना को जागृत किया।

परिचय

भक्ति काल भारतीय साहित्य और संस्कृति का एक महत्वपूर्ण युग था, जो लगभग 14वीं से 17वीं शताब्दी तक फैला हुआ माना जाता है। यह वह समय था जब भारतीय उपमहाद्वीप विभिन्न सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक उथल-पुथल से गुजर रहा था। एक ओर विदेशी आक्रमणों और मुस्लिम शासकों के प्रभाव से हिंदू समाज में असुरक्षा और अस्थिरता का माहौल था, तो दूसरी ओर समाज में गहराता जातिवाद, धार्मिक कट्टरता और पाखंड ने आम जनमानस को भीतर से खोखला कर दिया था। तत्कालीन सामाजिक संरचना कठोर जातिगत विभाजनों पर आधारित थी, जिसमें उच्च वर्ग के लोगों को विशेषाधिकार प्राप्त थे, जबकि शूद्र और तथाकथित अस्पृश्य वर्ग को सामाजिक जीवन से बहिष्कृत कर दिया गया था। धर्म के नाम पर आडंबर और पुरोहितवाद ने आम जनता को ईश्वर से दूर कर दिया था। ऐसे समय में भक्ति आंदोलन एक सामाजिक-सांस्कृतिक क्रांति के रूप में उभरा, जिसने व्यक्ति को जाति, लिंग और संप्रदाय से ऊपर उठकर सीधे ईश्वर से जुड़ने का मार्ग दिखाया।

भक्ति आंदोलन का मूल उद्देश्य धार्मिक आडंबरों का खंडन करना, आत्मिक साधना को प्राथमिकता देना और मानव मात्र को एक समान दृष्टि से देखना था। इस आंदोलन ने ईश्वर की भक्ति को सामाजिक समानता और प्रेम का आधार बनाया। संतों और कवियों ने जनभाषा में काव्य रचकर अपने विचारों को जनसामान्य तक पहुँचाया, जिससे सामाजिक बदलाव की एक सशक्त धारा प्रवाहित हुई।

इस प्रकार भक्ति काल में काव्य केवल धार्मिक साधना का माध्यम न होकर सामाजिक चेतना और समरसता का प्रभावशाली माध्यम बन गया। सामाजिक समरसता की आवश्यकता उस काल में जितनी प्रबल थी, उतनी ही आज के संदर्भ में भी प्रासंगिक है, जहाँ जातिगत भेदभाव, वर्ग संघर्ष और धार्मिक असहिष्णुता फिर से समाज में अपनी जड़ें मजबूत कर रहे हैं।

मुख्य भाग

भक्ति आंदोलन भारतीय समाज के इतिहास में एक ऐसी सांस्कृतिक और सामाजिक क्रांति थी, जिसने शास्त्रों, पुरोहितवाद और रूढ़ियों के जाल में जकड़े समाज को मानवीय मूल्यों, समानता और आध्यात्मिकता की नई चेतना दी। यह आंदोलन महज धार्मिक नहीं, बल्कि सामाजिक रूप से अत्यंत परिवर्तनकारी था। इसकी दो प्रमुख धाराएँ थीं सगुण

भक्ति (वैष्णव परंपरा) और निर्गुण भक्ति (ईश्वर को निराकार मानने वाली परंपरा)। दोनों धाराओं का उद्देश्य जनमानस को जाति, वर्ग, लिंग और धर्म के बंधनों से मुक्त कर आत्मा और परमात्मा के सीधे संबंध को स्थापित करना था।

भक्ति आंदोलन और सामाजिक क्रांति

भक्ति आंदोलन एक ऐसी लहर थी जिसने समाज के निचले तबके, महिलाओं और उपेक्षित वर्गों को न केवल आध्यात्मिक बल्कि सामाजिक गरिमा भी प्रदान की। वैष्णव शाखा, जिसमें तुलसीदास, सूरदास और मीराबाई जैसे कवि थे, ने राम और कृष्ण जैसे देवताओं के माध्यम से भक्ति को सहज और सुलभ बनाया। वहीं, निर्गुण भक्ति परंपरा के संत जैसे कबीर और रविदास ने ईश्वर को निराकार माना और जातिवाद, धार्मिक पाखंड और मूर्तिपूजा का विरोध किया। निर्गुण भक्ति की यह विशेषता रही कि इसमें ईश्वर और आत्मा के बीच किसी मध्यस्थ की आवश्यकता नहीं मानी गई, जिससे सामाजिक स्तर पर ब्राह्मणवाद की श्रेष्ठता को चुनौती मिली। इससे सामाजिक चेतना का प्रसार हुआ और लोगों को आत्मसम्मान व समानता का बोध हुआ।

भक्ति कवियों की सामाजिक दृष्टि

भक्ति कवियों ने अपने काव्य में केवल ईश्वर की स्तुति नहीं की, बल्कि समाज की विकृतियों पर तीखा प्रहार भी किया। उनकी दृष्टि लोकमंगलकारी थी और उनका उद्देश्य था ऐसे समाज का निर्माण जिसमें हर व्यक्ति को सम्मान और स्वतंत्रता प्राप्त हो। उन्होंने सामाजिक विषमता, धर्म के नाम पर हो रहे भेदभाव और स्त्री की दुर्दशा पर गंभीर विचार प्रस्तुत किए।

प्रमुख कवियों के विचार

कबीर समाज में व्याप्त पाखंड और जातिवाद के कट्टर विरोधी थे। वे न तो हिंदू धर्म की कर्मकांड परंपरा को मानते थे, न ही इस्लाम की कट्टरता को। उनके दोहे जैसे "जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान" यह स्पष्ट करते हैं कि उन्होंने जाति को किसी भी मानवीय मूल्यांकन के लिए अस्वीकार्य माना। वे कर्म और ज्ञान के आधार पर व्यक्ति को आंकते थे। कबीर ने निर्गुण भक्ति के माध्यम से यह संदेश दिया कि ईश्वर सबमें समान रूप से विद्यमान है और सबको समान अधिकार प्राप्त हैं।

संत रविदास भी जातिगत भेदभाव के विरुद्ध आवाज़ उठाने वाले संत कवि थे। एक चर्मकार होने के बावजूद उन्होंने आध्यात्मिक और सामाजिक क्षेत्र में गहरी छाप छोड़ी। उन्होंने "ऐसा चाहूं राज मैं, जहां मिले सबन को अन्न" जैसी पंक्तियों के माध्यम से एक ऐसे समतामूलक समाज की कल्पना की, जहाँ कोई ऊँच-नीच न हो। उन्होंने आत्मसम्मान को सामाजिक विकास की कुंजी माना।

मीराबाई, जो एक राजघराने की महिला थीं, उन्होंने सामाजिक परंपराओं और स्त्री जीवन की मर्यादाओं को चुनौती देते हुए कृष्ण-भक्ति को जीवन का केंद्र बनाया। उन्होंने विवाह, पति-पत्नी के दायित्व और समाज की स्त्री को लेकर बनी रूढ़ियों को नकारा। उनकी भक्ति व्यक्तिगत मुक्ति का मार्ग बनी, जिसमें स्त्री अपनी इच्छा और विश्वास से ईश्वर की उपासना करती है। मीराबाई की काव्य भाषा सरल, भावपूर्ण और आत्मिक है, जिससे जनमानस से गहरा संबंध बनता है।

तुलसीदास और **सूरदास** ने सगुण भक्ति को लोकप्रिय बनाते हुए लोकभाषा में उच्च कोटि का साहित्य रचा। तुलसीदास के रामचरितमानस ने राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में प्रस्तुत किया और हिंदू समाज को एकता के सूत्र में बाँधने का कार्य किया। वहीं सूरदास ने बालकृष्ण की लीलाओं के माध्यम से प्रेम, भक्ति और करुणा के भावों को विस्तार

दिया। दोनों कवियों ने संस्कृत जैसी शास्त्रीय भाषा को छोड़कर अवधी और ब्रज जैसी जनभाषाओं को माध्यम बनाया, जिससे धार्मिक संदेश जनसाधारण तक पहुँचे और सामाजिक एकता को बल मिला।

भाषा और लोकसंस्कृति की भूमिका

भक्ति कवियों ने संस्कृत जैसी कठिन भाषा के स्थान पर लोकभाषाओं को अपनाया जैसे कबीर की साखियाँ सधुक्कड़ी में, तुलसी की चौपाइयाँ अवधी में, सूरदास की पदावली ब्रज में। इससे उनका काव्य आम जनता के बीच लोकप्रिय हुआ। इसने सामाजिक संवाद को जन्म दिया और ज्ञान का प्रसार उन वर्गों तक पहुँचा, जो अब तक उससे वंचित थे। भाषा और शैली की यह सरलता ही भक्ति काव्य की सबसे बड़ी ताकत रही, जिसने उसे एक आंदोलन का रूप दे दिया। भक्ति काव्य की लोकसंस्कृति से जुड़ाव ने उसे जन-जन की चेतना का हिस्सा बना दिया। भजन, कीर्तन, पद गायन जैसे माध्यमों से इन कवियों की वाणी गाँव-गाँव में गूंजने लगी और धार्मिक अनुभव सामाजिक जागरूकता में बदल गया।

समकालीन सन्दर्भ में प्रासंगिकता

आज के समाज में जब जातिवाद, सांप्रदायिकता, और लैंगिक असमानता फिर से उभर रहे हैं, भक्ति कालीन काव्य की विचारधारा अत्यंत प्रासंगिक हो जाती है। भक्ति कवियों की वाणी हमें यह सिखाती है कि धर्म का सच्चा स्वरूप आत्मिक शुद्धि और सामाजिक एकता है, न कि बाहरी आडंबर और भेदभाव। आधुनिक भारत में सामाजिक समरसता के लिए हमें उसी समन्वयवादी दृष्टि की आवश्यकता है, जो कबीर, रविदास और मीरा ने अपने काव्य में दी थी।

भक्ति काव्य न केवल धार्मिक प्रेरणा का स्रोत है, बल्कि यह सामाजिक सुधार का भी माध्यम है। समकालीन शिक्षाविदों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और नीतिनिर्माताओं को इन काव्यों में सामाजिक चेतना और समरसता के ऐसे सूत्र मिलते हैं, जो आज भी हमारे समाज को जोड़ सकते हैं।

निष्कर्ष

भक्ति कालीन काव्य न केवल आध्यात्मिक चेतना का माध्यम रहा, बल्कि उसने सामाजिक चेतना को भी नया आयाम प्रदान किया। उस युग के संत कवियों ने जाति, धर्म, वर्ग और लिंग आधारित भेदभाव का विरोध करते हुए एक ऐसे समाज की परिकल्पना की, जहाँ समता, सहिष्णुता और मानवता के मूल्य सर्वोपरि हों। कबीर, रविदास, मीरा, तुलसी और सूरदास जैसे कवियों ने भक्ति को व्यक्तिगत मुक्ति से आगे बढ़ाकर सामाजिक मुक्ति का मार्ग बनाया। उन्होंने धर्म को लोगों को जोड़ने का माध्यम माना, न कि बाँटने का। इन कवियों की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि इन्होंने जनभाषा में काव्य रचकर अपने विचारों को समाज के हर वर्ग तक पहुँचाया। उनके काव्य में न केवल आध्यात्मिक भावनाएँ थीं, बल्कि एक सामाजिक क्रांति का स्वर भी था, जो आज भी उतना ही प्रासंगिक है। सामाजिक समरसता, जो भक्ति काव्य का मूल तत्व है, आज के भारत की भी एक प्रमुख आवश्यकता है। जातिवाद, सांप्रदायिकता और लैंगिक भेदभाव जैसी समस्याओं से जूझते आधुनिक समाज के लिए भक्ति काल का साहित्य एक मूल्यवान दिशा-सूचक बन सकता है।

इसलिए, भक्ति कालीन काव्य को केवल धार्मिक दृष्टि से नहीं, बल्कि सामाजिक दृष्टि से भी समझना आवश्यक है। यह साहित्य हमें बताता है कि एक समतामूलक समाज की स्थापना केवल नीति-निर्माण से नहीं, बल्कि जनचेतना और सांस्कृतिक परिवर्तन से संभव है – और इस दिशा में भक्ति काव्य आज भी प्रेरणा का स्रोत है।

संदर्भ सूची

1. द्विवेदी, हजारी प्रसाद। कबीर। राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010।
2. सिंह, नामवर। कविता के नए प्रतिमान। राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005।
3. त्रिपाठी, विश्वनाथ। भक्ति आंदोलन और हिंदी साहित्य। लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2008।
4. मिश्र, रामचंद्र। हिंदी साहित्य का इतिहास। भारतीय विद्या भवन, मुंबई, 1995।
5. शर्मा, राम विलास। हिंदी साहित्य: भाषा और समाज। राजपाल एंड संस, नई दिल्ली, 2000।
6. भारतीय साहित्य का इतिहास, खंड 3, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।
7. दत्त, रमेशचंद्र। भारत का सांस्कृतिक इतिहास।
8. उपाध्याय, शीतला प्रसाद। भक्ति साहित्य और समाज।
9. यादव, रामनिवास। भक्ति आंदोलन: सामाजिक दृष्टिकोण।
10. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) के शोध पत्र और पीएच.डी. शोध प्रबंध (संबंधित विश्वविद्यालयों से)।